वीर ज्ञानोदय ग्रन्थमाला का पुष्प नं. 315
ISBN 978-93-80353-33-3

तीन लोक रचना एवं वंदना

– रचयित्री –

परमपूज्य गणिनीप्रमुख आर्यिकाशिरोमणि

श्री ज्ञानमती माताजी

शरदपूर्णिमा महोत्सव, 11 अक्टूबर 2011 को जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर में
पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी द्वारा घोषित
''प्रथम पट्टाचार्य श्री वीरसागर वर्ष'' के अन्तर्गत प्रकाशित

-प्रकाशक-

दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान

जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर (मेरठ) उ.प्र.
फोन नं.- (01233) 280184, 280994
Website : www.jambudweep.org
E-mail : jambudweeptirth@gmail.com

द्वितीय संस्करण	वीर नि. सं. 2538, माघ कृ. 14	मूल्य
1100 प्रतियाँ	22 जनवरी 2012	12/-रु.

दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान द्वारा संचालित

वीर ज्ञानोदय ग्रन्थमाला

इस ग्रन्थमाला में दिगम्बर जैन आर्षमार्ग का पोषण करने वाले हिन्दी, संस्कृत, प्राकृत, कन्नड़, अंग्रेजी, गुजराती, मराठी आदि भाषाओं के न्याय, सिद्धान्त, अध्यात्म, भूगोल-खगोल, व्याकरण आदि विषयों पर लघु एवं वृहद् ग्रंथों का मूल एवं अनुवाद सहित प्रकाशन होता है। समय-समय पर धार्मिक लोकोपयोगी लघु पुस्तिकाएं भी प्रकाशित होती रहती हैं।

-: संस्थापिका एवं प्रेरणास्रोत :-

परमपूज्य गणिनीप्रमुख आर्यिकाशिरोमणि श्री ज्ञानमती माताजी

-: मार्गदर्शन :-

प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका श्री चन्दनामती माताजी

-: निर्देशक एवं सम्पादक :-

स्वस्तिश्री कर्मयोगी पीठाधीश रवीन्द्रकीर्ति स्वामी जी

-: प्रबंध सम्पादक :-

जीवन प्रकाश जैन

प्रथम संस्करण, सन् 2010–1100 प्रतियाँ प्रकाशित

सर्वाधिकार प्रकाशकाधीन

कम्पोजिंग - ज्ञानमती नेटवर्क
जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर (मेरठ) उ.प्र.

दो शब्द

–प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका चंदनामती

जैनधर्म के सोलहवें-सत्रहवें-अठारहवें तीर्थंकर श्री शांतिनाथ-कुंथुनाथ-अरहनाथ के गर्भ-जन्म-दीक्षा-केवलज्ञान इन चार-चार कल्याणकों से पवित्र हस्तिनापुर तीर्थ है। इस तीर्थ पर जैन समाज की सर्वोच्च साध्वी पूज्य गणिनीप्रमुख आर्यिकाशिरोमणि श्री ज्ञानमती माताजी की प्रेरणा से निर्मित जम्बूद्वीप रचना के कारण आज पूरे विश्व में हस्तिनापुर का नाम प्रसिद्ध हो गया है।

यहाँ जम्बूद्वीप रचना निर्माण के साथ-साथ अनेक आकर्षक निर्माण एवं धर्मप्रभावना के विभिन्न कार्यकलाप समय-समय पर सम्पन्न होते रहते हैं। इसी श्रृँखला में तीन लोक की अद्वितीय रचना का निर्माण एवं तीर्थंकर श्री शांतिनाथ-कुंथुनाथ-अरहनाथ की 31-31 फुट उत्तुंग खड्गासन प्रतिमाओं का निर्माण तीर्थ की कीर्ति में चार चांद लगाने जा रहा है।

अतः इन सब प्रतिमाओं की पंचकल्याणक प्रतिष्ठा, तीर्थंकरत्रय महामस्तकाभिषेक महोत्सव एवं तीनलोक रचना के उद्घाटन अवसर पर इस ''तीन लोक रचना एवं वंदना'' नामक पुस्तक सम-सामायिक रूप से समस्त आगंतुक श्रद्धालु भक्तों के लिए प्रकाशित की जा रही है। इसके माध्यम से आप सभी पाठकों को तीन लोक की रचना का ज्ञान प्राप्त होगा, साथ ही हस्तिनापुर के इतिहास से संबंधित छोटी-छोटी स्तुति आदि के द्वारा पुण्यबंध का अवसर मिलेगा। अतः इस लघु पुस्तिका के द्वारा आप सभी भक्तजन जिनवर भक्ति का मार्ग प्रशस्त करें, यही मंगल भावना है।

जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर **2-2-2010**

विषयानुक्रमणिका

क्र.स.	विषय	पृष्ठ सं.
1.	तीन लोक रचना-परिचय	5-10
2.	त्रैलोक्य वंदनाष्टक	11-12
3.	शांतिजिन स्तुति	12-13
4.	कुंथुजिन स्तुति	13-14
5.	अरजिन स्तुति	14
6.	जम्बूद्वीप वंदना	15
7.	सात शतक मुनिवंदना	15
8.	सप्तर्षि वंदना	15
9.	जिनवाणी वंदना	15-16

भजन

–प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका चंदनामती

तर्ज–जंगल जंगल धूम मची है.....

जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर से, बात सुनी है।
तीन लोक की रचना सुन्दर, वहाँ बनी है।-2
जम्बूद्वीप से पता चली है, बात सुनी है, बात सुनी है।
तीन लोक की रचना सुन्दर, वहाँ बनी है, वहाँ बनी है।।टेक.।।
ज्ञानमती, माताजी की, प्रेरणा मिली है।
इसीलिये, भक्तों में नव, चेतना खिली है।-2
मैंने टी.वी. के माध्यम से, बात सुनी है।
अरे, तीन लोक की रचना सुन्दर वहाँ बनी है।-2
तीन लोक की रचना सुन्दर, वहाँ बनी है, वहाँ बनी है।।1।।
अधोलोक में, नरक भयावह, देखो कितने।
पापकर्म, करने वाले, जाते हैं उनमें।।
मध्यलोक से मोक्षगमन की, बात सुनी है।
अरे, तीन लोक की रचना सुन्दर वहाँ बनी है।-2
तीन लोक की रचना सुन्दर, वहाँ बनी है, वहाँ बनी है।।2।।
ऊर्ध्वलोक में, स्वर्ग देखकर, मन ललचाता।
पुण्यकर्म, करने से मानव, स्वर्ग में जाता।।
अर्धचन्द्रसम सिद्धशिला की, बात सुनी है।
अरे, तीन लोक की रचना सुन्दर वहाँ बनी है।-2
तीन लोक की रचना सुन्दर, वहाँ बनी है, वहाँ बनी है।।3।।
यूँ तो सिद्धशिला से वापस, कोई न आता।
शाश्वतकाल, वहीं आत्मा, सुख-शांती पाता।।
उस सुख की तुलना संसार में, कहीं नहीं है।
तीन लोक की रचना सुन्दर वहाँ बनी है।-2
अरे, तीन लोक की रचना सुन्दर वहाँ बनी है।-2
तीन लोक की रचना सुन्दर, वहाँ बनी है, वहाँ बनी है।।4।।
कृत्रिम सिद्धशिला का भाव से, दर्शन करना।
सदा हृदय में, सिद्ध प्रभू का, सुमिरन करना।।
यही 'चंदनामती' आज, भावना बनी है।
अरे, तीन लोक की रचना सुन्दर वहाँ बनी है।-2
तीन लोक की रचना सुन्दर, वहाँ बनी है, वहाँ बनी है।।5।।

तीन लोक रचना

सिद्धि प्रदानि चैत्यानि, यावन्ति भुवनत्रये।
तावन्ति शिरसा वन्दे, नित्यं सर्वार्थसिद्धये।।1।।

तीनलोक—तीन लोक की ऊँचाई 14 राजु प्रमाण है एवं मोटाई सर्वत्र 7 राजु है।

तीन लोक के जड़ भाग से लोक की ऊँचाई का प्रमाण—अधोलोक की ऊँचाई 7 राजु है। इसमें 7 भूमियाँ हैं।

ऊर्ध्वलोक की ऊँचाई 7 राजु है। इसमें प्रथम स्वर्ग से लेकर सिद्धशिला पर्यंत व्यवस्था है।

अधोलोक के तल भाग में लोक की चौड़ाई 7 राजु है। यह चौड़ाई घटते-घटते मध्यलोक में 1 राजु रह गई है। मध्यलोक से ऊपर बढ़ते-बढ़ते ब्रह्मलोक (5वें स्वर्ग) तक 5 राजु हो गई है पुनः ब्रह्मस्वर्ग से ऊपर घटते-घटते सिद्धशिला तक चौड़ाई 1 राजु रह गई। इस प्रकार यह लोक पैर फैलाकर खड़े हुए एवं कमर पर हाथ रखे हुए पुरुष के समान बन गया है।

त्रसनाड़ी—तीनों लोकों के बीचों बीच में 1 राजु चौड़ी-मोटी तथा 14 राजु ऊँची-लम्बी त्रसनाड़ी है।

इस त्रसनाड़ी में ही त्रसजीव-दो इन्द्रिय, तीन इन्द्रिय, चार इन्द्रिय और पंचेन्द्रिय जीव पाये जाते हैं। शेष सम्पूर्ण लोक में स्थावर—एकेन्द्रिय जीव ही रहते हैं।

अधोलोक—अधोलोक में 7 पृथ्वी हैं, उनके नाम—रत्नप्रभा, शर्कराप्रभा, बालुका प्रभा, पंकप्रभा, धूमप्रभा, तमःप्रभा और महातमःप्रभा। रत्नप्रभा पृथ्वी के तीन भाग हैं—खरभाग, पंकभाग और अब्बहुलभाग। इस अब्बहुलभाग में प्रथम नरक हैं।

अधोलोक में सबसे नीचे निगोद स्थान है। वहाँ यह अनादिकाल से एकेन्द्रिय अवस्था में है। वहाँ एक श्वांस में अठारह बार जन्म मरण होता है। इतनी तुच्छ—अल्प आयु है। हम और आप सभी वहीं से आकर त्रस पर्याय को प्राप्त कर मनुष्य हुए हैं।

पुनः सातवाँ नरक है। ऐसे क्रम से छठा, पाँचवाँ, चौथा, तीसरा, दूसरा एवं पहला नरक है। इन नरकों में नारकी जीव प्रतिक्षण दुःख भोग रहे हैं। आरे से चीरे

जाना, कढ़ाई में तले जाना, तिल-तिल बराबर टुकड़े किये जाना आदि कष्ट आपस में एक-दूसरे को देते रहते हैं। जो यहाँ हिंसा, झूठ, चोरी, व्यभिचार, शिकार, परस्त्रीसेवन आदि पाप करते हैं। वे नरकों में जाकर दुःख भोगते हैं। इन नारकियों के दुःखों को देखकर आप पाप न करने की प्रतिज्ञा करें।

अधोलोक में प्रथम पृथ्वी के तीन भाग में से खरभाग में भवनवासी देवों के भवन हैं। भवनवासी देवों के 10 भेद हैं—असुरकुमार आदि। इनके क्रमशः 64 लाख आदि भवन हैं। प्रत्येक भवनों में विशाल जिनमंदिर हैं। इन प्रत्येकभवनवासी देवों में इंद्र, सामानिक, त्रायस्त्रिंश, पारिषद, आत्मरक्ष, लोकपाल, अनीक, प्रकीर्णक, आभियोग्य और किल्विषक ऐसे दश भेद माने हैं।

भवनवासी के 10 भेद एवं उनके विमानों की संख्या

भवनवासी के 10 भेद	*विमान संख्या*	*भवनवासी के 10 भेद*	*विमान संख्या*
असुर कुमार के	64 लाख	स्तनित कुमार के	76 लाख
नाग कुमार के	84 लाख	विद्युत्कुमार के	76 लाख
सुपर्ण कुमार के	72 लाख	दिक्कुमार के	76 लाख
द्वीप कुमार के	76 लाख	अग्नि कुमार के	76 लाख
उदधि कुमार के	76 लाख	वायु कुमार के	96 लाख

इन भवनवासी के 10 भेदों में एक-एक में इन्द्र के भवन में ओलगशाला के आगे एक-एक चैत्यवृक्ष हैं। असुरकुमारेन्द्र का चैत्यवृक्ष पीपल है। इसकी कटनी पर जिनप्रतिमाएँ हैं। ऐसे ही नागकुमारेन्द्र का सप्तपर्ण, सुपर्णकुमार का शाल्मलि, द्वीपकुमार काजामुन, उदधिकुमार का वेंतस, स्तनितकुमार का कदंब, विद्युत्कुमार का प्रियंगु, दिक्कुमार का शिरीष, अग्निकुमार का पलाश और वायुकुमार का चिरोंजी चैत्यवृक्ष है।

कुल मिलाकर भवनवासी देवों के भवन 7 करोड़ 72 लाख हैं। इन प्रत्येक भवनों में 1-1 जिनमंदिर हैं। अतः भवनवासी के 7,72,00,000 जिनमंदिर हैं। इनके चैत्यवृक्षों में भी जिनप्रतिमाएँ विराजमान हैं।

यहाँ अधोलोक के खरभाग में असुरकुमार को छोड़कर शेष 9 प्रकार के देवों के 7 करोड़ 8 लाख भवन हैं।

द्वितीय पंकभाग में असुरकुमार के 64 लाख भवन हैं।

व्यंतर देवों के भेद व भवन आदि—व्यंतर देव के किन्नर, किंपुरुष आदि 8 भेद हैं। प्रत्येक के असंख्यातों भवन हैं। इनके भवन, भवनपुर और आवास ऐसे तीन प्रकार के स्थान माने गये हैं। अधोलोक के खरभाग में राक्षस को छोड़कर सात प्रकार के व्यंतर देवों के भवन हैं तथा पंकभाग में राक्षस जाति के व्यंतर देवों के भवन हैं।

मध्यलोक में द्वीप, समुद्रों में इनके भवनपुर हैं एवं पर्वत, सरोवर, वृक्ष आदि के ऊपर इनके आवास माने गये हैं। ये सभी व्यंतरदेव असंख्यातों हैं।

व्यंतर देवों के 8 भेद के नाम–1. किन्नर देव, 2. किंपुरुष देव, 3. महोरग देव, 4. गंधर्व देव, 5. यक्ष देव, 6. राक्षस देव, 7. भूतदेव, 8. पिशाच देव

इन व्यंतर देवों के इंद्रों के महल के आगे चैत्यवृक्ष माने गये हैं। किन्नरेंद्र का चैत्यवृक्ष अशोक, किंपुरुषेन्द्र का चंपक, महोरगेंद्र का नागद्रुम, गंधर्वेन्द्र का तुंबरु, यक्षेंद्र का वट, राक्षसेंद्र का कंटक, भूतेन्द्र का तुलसी एवं पिशाचेन्द्र का कदंब चैत्यवृक्ष है। इन सभी चैत्यवृक्षों में जिनप्रतिमाएँ विराजमान हैं।

मध्यलोक–एक राजु प्रमाण विस्तृत एवं एक लाख योजन ऊँचा मध्यलोक है। इसमें असंख्यात द्वीप-समुद्र हैं। प्रथम द्वीप का नाम जंबूद्वीप है। यह एक लाख योजन व्यास वाला, गोल थाली के समान है। इसको चारों तरफ घेरकर लवणसमुद्र, उसको चारों तरफ से घेरकर धातकीखण्ड, इसे चारों तरफ से घेरकर कालोदधि समुद्र, इसे घेरकर पुष्करद्वीप आदि द्वीप-समुद्र हैं।

तेरहद्वीप समुद्रों के नाम

जंबूद्वीप	–	लवण समुद्र
धातकीखण्ड द्वीप	–	कालोदधि समुद्र
पुष्करवर द्वीप	–	पुष्कवर समुद्र
वारुणीवरद्वीप	–	वारुणीवर समुद्र
क्षीरवर द्वीप	–	क्षीरवर समुद्र
घृतवर द्वीप	–	घृतवर समुद्र
क्षौद्रवर द्वीप	–	क्षौद्रवर समुद्र
नंदीश्वर द्वीप	–	नंदीश्वर समुद्र
अरुणवर द्वीप	–	अरुणवर समुद्र
अरुणाभास द्वीप	–	अरुणाभास समुद्र
कुण्डलवर द्वीप	–	कुण्डलवर समुद्र
शंखवर द्वीप	–	शंखवर समुद्र
रुचकवर द्वीप	–	रुचकवर समुद्र

ऐसे असंख्यातों द्वीप-समुद्रों के बाद अंतिम स्वयंभूरमण द्वीप एवं स्वयंभूरमण समुद्र है। इस मध्यलोक में ढाईद्वीप तक कर्मभूमि है। यहीं तक मनुष्य हैं। आगे सभी द्वीपों में तिर्यंच-युगल रहते हैं। अंतिम स्वयंभूरमण द्वीप में बीचों-बीच में स्वयंप्रभ पर्वत है। उसके इधर तक तिर्यंचों की भोगभूमि है पुनः आधे स्वयंभूरमणद्वीप में और पूरे स्वयंभूरमण समुद्र में कर्मभूमियाँ तिर्यंच हैं। इनमें से कोई-कोई तिर्यंच जातिस्मरण अथवा देवों के संबोधन आदि से सम्यक्त्व तथा पाँच अणुव्रत ग्रहणकर देशव्रती बन जाते हैं, वे मरणकर देवगति को प्राप्त कर लेते हैं।

जंबूद्वीप के बीचों-बीच में सुदर्शनमेरु पर्वत है। यह एक लाख योजन ऊँचा है। इसकी चूलिका 40 योजन की है। इसमें हिमवान आदि छह पर्वत, भरतक्षेत्र आदि सात क्षेत्र हैं। इसमें अकृत्रिम 78 जिनमंदिर हैं। सारी रचना आप हस्तिनापुर में खुले मैदान में निर्मित जम्बूद्वीप में देखें।

आगे पुष्कर द्वीप में बीच में चूड़ी के समान आकार वाला मानुषोत्तर पर्वत है अतः इस द्वीप के दो भाग हो गये। इस तरह जंबूद्वीप, धातकीखण्ड, आधा पुष्कर– पुष्करार्धद्वीप, इस प्रकार मानुषोत्तर पर्वत के पहले-पहले मनुष्यों के अस्तित्व हैं। यहीं तक पाँच मेरु, 170 कर्मभूमि आदि व्यवस्था है। यहाँ तक 398 अकृत्रिम जिनमंदिर हैं। इन सबकोआप हस्तिनापुर में निर्मित तेरहद्वीप जिनालय में देख सकते हैं।

मानुषोत्तर पर्वत से आगे आठवाँ द्वीप–नंदीश्वर द्वीप है। इसमें 52 जिनमंदिर एवं ग्यारहवें कुण्डलवर द्वीप तथा तेरहवें रुचकवर द्वीप के बीच-बीच में कुण्डलवर-रुचकवर पर्वतों पर चार-चार जिनमंदिर, ऐसे 398+52+4+4=458 अकृत्रिम जिनमंदिर मध्यलोक में है। इनके दर्शन आप 'तेरहद्वीप रचना' में करें।

ज्योतिर्लोक–यहाँ मध्यलोक में चित्रा पृथ्वी से 790 योजन ऊपर आकाश में अधर ज्योतिषी देवों के विमान हैं। सूर्य, चन्द्रमा, ग्रह, नक्षत्र और तारा ऐसे ज्योतिषी देवों के पाँच भेद हैं। ताराओं के विमान भूमि से 31 लाख साठ हजार मील की ऊँचाई पर हैं। सूर्य के विमान 32 लाख, चन्द्रमा के विमान 35 लाख 20 हजार मील की ऊँचाई पर हैं। ये विमान अर्धगोलक के समान हैं। इनमें समतल भाग में बीच में जिनमंदिर व चारों तरफ देवों के भवन बने हुए हैं। सूर्य का विमान 3147 मील का एवं सबसे छोटा तारा का विमान 250 मील का है। ये सूर्य, चन्द्र आदि असंख्यात द्वीप-समुद्रों में असंख्यातों ढाईद्वीप तक ये सूर्य, चन्द्र आदि मेरु प्रदक्षिणा के क्रम से भ्रमण करते रहते हैं। इसी से दिन-रात का विभाग होता है। ढाईद्वीप से आगे सभी सूर्यादि विमान स्थिर हैं। प्रत्येक में जिनमंदिर होने से ज्योतिषी देवों के जिनमंदिर असंख्यात हैं। इनका विशेष विवरण 'जैन ज्योतिर्लोक' पुस्तक से या त्रिलोकसार आदि से जानें।

ऊर्ध्वलोक–सुमेरु की चूलिका के ऊपर एक बालमात्र के अंतर से प्रथम स्वर्ग है। ऊर्ध्वलोक में-16 स्वर्ग, नवग्रैवेयक, नव अनुदिश और पाँच अनुत्तर हैं। पुनः सबसे ऊपर सिद्धशिला है।

16 स्वर्गों के नाम–

1. सौधर्म–ईशान स्वर्ग	2. सानत्कुमार–माहेन्द्र स्वर्ग
3. ब्रह्म–ब्रह्मोत्तर स्वर्ग	4. लांतव–कापिष्ठ स्वर्ग
5. शुक्र–महाशुक्र स्वर्ग	6. शतार–सहस्रार स्वर्ग
7. आनत–प्राणत स्वर्ग	8. आरण–अच्युत स्वर्ग

ये 16 स्वर्ग दो-दो एक साथ हैं।

सौधर्म स्वर्ग के 32 लाख विमान हैं। ईशान स्वर्ग के 28 लाख, सानत्कुमार के 12 लाख, माहेन्द्र के 8 लाख, ब्रह्म-ब्रह्मोत्तर के 4 लाख, लांतव-कापिष्ठ के 50 हजार, शुक्र-महाशुक्र के 40 हजार, शतार-सहस्रार के 6 हजार, आनत-प्राणत, आरण-अच्युत के 7 सौ विमान हैं। इनमें प्रत्येक इंद्र के महल के आगे वटवृक्ष नाम के चैत्यवृक्ष हैं। इनमें कटनी पर जिनप्रतिमाएँ विराजमान हैं। उनके आगे मानस्तंभ हैं।

सोलह स्वर्गों तक देव-देवियाँ दोनों हैं। इनमें इंद्र, सामानिक, पारिषद, त्रायस्त्रिंश, आत्मरक्ष, लोकपाल, अनीक, प्रकीर्णक, आभियोग्य और किल्विषक ये 10 भेद हैं। 16 स्वर्ग के ऊपर सभी अहमिंद्र हैं। वहाँ देवियाँ नहीं है।

सौधर्म-ईशान, सानत्कुमार और माहेन्द्र इन चार स्वर्गों में ऐसे मानस्तंभ बने हुए हैं, जिनमें रत्नों के पिटारे हैं। वहाँ उनमें तीर्थंकर भगवन्तों के लिए वस्त्र, अलंकार आदि वस्तुएँ उत्पन्न होती रहती हैं। देवगण वहाँ से लाकर यहाँ तीर्थंकर भगवन्तों को गार्हस्थ्य अवस्था में प्रदान करते हैं।

नवग्रैवेयक के नाम—सुदर्शन, अमोघ, सुप्रबुद्ध, यशोधर, सुभद्र, सुविशाल, सुमनस, सौमनस और प्रीतिंकर।

इनमें से तीन अधस्तन ग्रैवेयक के 111, तीन मध्यम के 107, तीन उपरिम के 91 विमान हैं।

नवअनुदिश के नाम—अर्चि, अर्चिमालिनी, वैर, वैरोचन, सोम, सोमरूप, अंक, स्फटिक और आदित्य, ये 1-1 विमान हैं।

पाँच अनुत्तर के नाम—विजय, वैजयंत, जयंत, अपराजित और सर्वार्थसिद्धि, ये भी 1-1 विमान हैं।

ऐसे सौधर्म स्वर्ग से लेकर 32 लाख सब मिलकर 8497023 विमान हैं। इन सबमें 1-1 जिनमंदिर हैं अतः ऊर्ध्वलोक के 84 लाख 97 हजार तेईस जिनमंदिर हैं। प्रत्येक विमान कोई संख्यात योजन के और कोई असंख्यात योजन के हैं। इन सबमें असंख्यातों देव रहते हैं।

स्वर्गों में माता-पिता से जन्म नहीं हैं। वहाँ उपपादशय्या बनी हुई हैं, जिनमें देव 48 मिनट में ही यौवन शरीर प्राप्त कर जन्म लेकर उठकर बैठ जाते हैं। जो हिंसा आदि पापों को छोड़कर देवपूजा, गुरुभक्ति, दान, तीर्थयात्रा, तपश्चरण आदि पुण्य करते हैं। वे देव योनि को प्राप्त करते हैं अतः आपको सदैव पुण्य संपादन करना चाहिए।

सिद्धशिला—लोक के अग्रभाग पर मनुष्यलोक—ढाईद्वीप प्रमाण विस्तृत—45 लाख योजन प्रमाण सिद्धशिला है। ये मध्य में आठ योजन ऊँची है और क्रम से घटते हुए एक अणु प्रमाण रह गई है। यह "उत्तानचषकमिव[1]"-सीधे रखे हुए कटोरे के समान है—अर्धचंद्र के समान है। ढाईद्वीप से अनादिकाल से लेकर आज तक अनंतानंत

1. त्रिलोकसार गाथा 556-557-558।

सिद्ध परमेष्ठी हुए हैं अतः वहाँ पर एक अणुमात्र भी जगह खाली नहीं है।

ये सिद्ध भगवान सिद्धशिला के ऊपर घनोदधिवातवलय, धनवातवलय से ऊपर तनुवालवलय में विराजमान हैं। सभी सिद्धों के मस्तक तनुवातवलय के अंतिम भाग से स्पर्शित हैं। आगे लोकाकाश के बाहर धर्मास्तिकाय का अभाव होने से एवं अलोकाकाश में जीव द्रव्य के नहीं होने से सिद्ध भगवान वहीं तक लोक के अग्रभाग में विराजमान हैं। उन अनंतानंत सिद्धों को हमारा अनंत-अनंत बार नमस्कार होवे।

नवनिर्मित तीनलोक रचना—यहाँ जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर में नवनिर्मित तीनलोक रचना में अधोलोक में नारकी दिखाये गये हैं। इसी अधोलोक में प्रथम पृथ्वी के खरभाग और पंकभाग में भवनवासी के 10 भेद व व्यंतर देवों के 8 भेदों के 1-1 मंदिर ऐसे 10+8=18 मंदिर स्थापित हैं। उन 18 प्रकार के इंद्रों के महल के आगे के प्रतीक में 18 चैत्यवृक्ष हैं। उनमें भी 4-4 प्रतिमाएँ विराजमान हैं।

मध्यलोक में-ढाईद्वीप में पाँच मेरु दिखाये गये हैं एवं श्री ऋषभदेव, शांतिनाथ आदि की प्रतिमाएँ विराजमान हैं। यहाँ मध्यलोक में मनुष्य और तिर्यंच दिखाये गये हैं। यहीं पर सूर्य, चंद्र, ग्रह, नक्षत्र व ताराओं के विमान दिखाये गये हैं।

मध्यलोक के ऊपर सोलह स्वर्गों में 1-1 मंदिर हैं। सौधर्मेन्द्र के महल आदि बने हैं। इंद्र सभा बनाई गई हैं। चैत्यवृक्ष एवं मानस्तंभ तथा नीलांजना आदि नृत्यांगनाएँ हैं। यथास्थान इंद्र-इन्द्राणी, देव-देवियाँ दिखाये गये हैं।

इनसे ऊपर नवग्रैवेयक में नवमंदिर, नव अनुदिश के 9 मंदिर एवं पाँच अनुत्तर के 5 मंदिर हैं। यथास्थान अहमिन्द्र दिखाये गये हैं।

अनंतर सिद्धशिला पर पद्मासन एवं खड्गासन सिद्धप्रतिमाएँ विराजमान हैं।

इस प्रकार यहाँ तीनलोक रचना में अधोलोक में 10+8=18 मंदिर, मध्यलोक में पाँच मेरु में प्रतिमाएँ, मध्यलोक में प्रतिमाएँ एवं सूर्य, चंद्र में प्रतिमा विराजमान हैं। ऊर्ध्वलोक में 16+9+9+5=39 मंदिर हैं। ऐसे 10+8+16+9+9+5=57 मंदिरों में प्रत्येक में 4-4 प्रतिमाएँ विराजमान हैं।

अधोलोक में 18 एवं 16 स्वर्गों में 16 ऐसे 18+16=34 चैत्यवृक्षों में 4-4 प्रतिमाएँ विराजमान हैं।

इस प्रकार 57 मंदिर में 57×4=228 पुनः 34 चैत्यवृक्षों की 34×4=136, मध्यलोक में मेरु की 40+2 सूर्य, 2 चंद्र की 4 तथा अन्य 28 प्रतिमाएँ एवं सिद्धशिला की 4 पद्मासन एवं 8 खड्गासन ऐसी 12 प्रतिमाएँ हैं। कुल मिलाकर 228+136+40+4+28+12=448 प्रतिमाएँ यहाँ विराजमान हैं। इन सभी 448 जिनप्रतिमाओं को तीनलोक भ्रमण समापन हेतु मेरा मन, वचन, कायपूर्वक अनंत-अनंत बार नमस्कार होवे।

त्रैलोक्य वंदनाष्टक

–शम्भु छन्द –

त्रिभुवन के जितने चैत्यालय, अकृत्रिम उनको नित वंदूँ।
भव भव के संचित पाप पुंज, उन सबको इक क्षण में खंडूँ।।
असुरों के चौंसठ लाख नागसुर, के चौरासी लाख कहे।
वायूसुर के छ्यानवे लाख, सुपरण के बहत्तर लक्ष कहें।।1।।

विद्युत् अग्नी स्तनित उदधि, दिक् द्वीपकुमार भवनवासी।
इन छह में पृथक्-पृथक् जिनगृह, छ्यत्तर लक्ष सुगुण-राशी।।
सब लक्ष बहत्तर सात कोटि, ये जिनगृह भवनालय सुर के।
ये अधोलोक के जिनमंदिर, नितप्रति वंदूँ अंजलि करके।।2।।

इस मध्यलोक के पाँच मेरु, के अस्सी तीस कुलाचल के।
रजताचल के इक सौ सत्तर, अस्सी हैं वक्षाराचल के।।
गजदंत गिरी के बीस भवन, जंबू शाल्मलि के दश मानें।
इष्वाकृति नग के चार चार, मनुजोत्तर के भी भव हानें।।3।।

अंजनगिरि के चउ दधिमुख के, सोलह रतिकर के बत्तिस हैं।
नंदीश्वर द्वीप जिनालय ये, बावन अतिशय गुणमंडित हैं।।
कुंडलगिरि रुचकगिरी के भी, हैं चार चार सब मिल करके।
ये चार शतक अट्ठावन हैं, जिनमंदिर मध्यलोक भर के।।4।।

व्यंतरदेवों ज्योतिष सुर के, सब संख्यातीत जिनालय हैं।
इस ऊपर ऊर्ध्वलोक में भी, वैमानिक वंदित आलय हैं।।
सौधर्म स्वर्ग में जिनमंदिर, बत्तीस लाख शाश्वत मानों।
ईशान स्वर्ग में अट्ठाईस, हैं लाख जिनालय सरधानों।।5।।

सानत्कुमार में बारह लख, माहेन्द्र स्वर्ग में आठ लक्ष।
दिव ब्रह्मयुगल में चार लाख, लांतव युग में पच्चास सहस।।
चालिस हजार दिव शुक्र युगल में, छह हजार युग शतार में।
जिननिलय सात सौ आनत औ, प्राणत आरण अच्युत दिव में।।6।।

ग्रैवेयक तीन अधो में हैं, इक सौ ग्यारह मध्यम त्रय में।
हैं इक सौ सात तथा जिनगृह, हैं निन्यानवे ऊर्ध्व त्रय में।।
नव अनुदिश में नव जिनमंदिर, पंचानुत्तर में पाँच कहें।
इन सबका वंदन करते ही, भविजन मनवांछित सिद्धि लहें।।7।।

तीनों लोकों के ये जिनगृह, सब आठ कोटि छप्पन सुलक्ष।
सत्तानवे सहस चार सौ औ, इक्यासी प्रमित कहे शाश्वत।।
नव सौ पच्चीस कोटी त्रेपन, हैं लाख सताइस सहस सही।
नव सौ अड़तालीस जिनप्रतिमा, प्रति जिनगृह इक सौ आठ कहीं।।8।।

सब जिनगृह में अनुपम शाश्वत, मानस्तंभादिक रचनाएँ।
वर्णन पढ़ते ही जन मन में, दर्शन की इच्छा प्रकटाएँ।।
जिनबिंब पांचशत धनुष तुंग, उन वीतराग छवि मनहारी।
मैं केवल "ज्ञानमती" हेतू, नित नमूँ जिनालय सुखकारी।।9।।

श्री शांतिजिन स्तुति

–शम्भु छन्द –

श्री शांति प्रभो! शरणागत जन, शान्ती के दाता कहें तुम्हें।
यह धन्य हुई हस्तिनापुरी, जहाँ राज्य किया शांतीश्वर ने।।
विश्वसेन पिता ऐरादेवी, माता का अतिशय पुण्य खिला।
भादों वदि सप्तमि के प्रभु के, गर्भागम का सौभाग्य मिला।।1।।

शुभ ज्येष्ठ वदी चौदस आई, शांतीश्वर ने जब जन्म लिया।
सुरगृह में बाजे बाज उठे, इन्द्रों ने मस्तक नमित किया।।
त्रिभुवन में शांति लहर दौड़ी, नरकों में कुछ क्षण शांति हुई।
गिरि मंदर पर अभिषेक हुआ, उत्सव में भू नभ एक हुई।।2।।

शांतीश प्रभू चक्रीश बने, षट्खंड मही का भोग किया।
शुभ ज्येष्ठ वदी चौदस के दिन, बस चक्ररत्न को त्याग दिया।।
इक शतक साठ कर तनु सुन्दर, आयू इक लाख वर्ष प्रभु की।
तपनीय कनक सम कांति विभो! मृग लांछन से जाने सब ही।।3।।

प्रभु ध्यान चक्र को ले करके, मोहारि नृपति को मारा था।
वर पौष सुदी दशमी के दिन, भव्यों को मिला सहारा था।।
षोडश तीर्थंकर कामदेव, द्वादश पंचम चक्री स्वामी।
वर ज्येष्ठ वदी चौदस के दिन, त्रिभुवन साम्राज्य मिला नामी।।4।।

प्रभु नर्क-निगोद अरु विकलत्रय, दुःखों को सहता आया हूँ।
तिर्यंच-मनुज-सुर गतियों के, दुःखों से खूब सताया हूँ।।

अब इष्टवियोग-अनिष्टयोग के, दुःख से भी घबराया हूँ।
तुम शांती के दाता भगवन्, अतएव शरण में आया हूँ।।5।।

सम्यग्दर्शन औ ज्ञान चरण, ये रत्नत्रय निधि मुझे मिली।
तनु से ममता भव बीज अहा! सम्यग्दृक् कलिका आज खिली।।
हे शांतिनाथ! मैं नमूँ सदा, बस भक्ती का फल एक मिले।
कैवल्य ''ज्ञानमति'' प्राप्त करूँ, बस मुझको सिद्धी शीघ्र मिले।।6।।

श्री कुंथुजिन स्तुति

–शम्भु छन्द –

जितने भी पुद्गल इस जग में, सबको भोगा छोड़ा मैंने।
अब सब उच्छिष्ट सदृश मुझको, हा फिर भी ममता है इनमें।।
नभ के प्रत्येक प्रदेशों को, मैं जन्म-मरण से पूर्ण किया।
त्रिभुवन में जी भर घूम चुका, नहिं कुछ भी क्षेत्र अपूर्ण रहा।।1।।

जो हुए अनंतानंतों ही, उत्सर्पिणि-अवसर्पिणी समय।
उन सबमें जन्म-मरण करता, आया नहिं छोड़ा एक समय।।
चारों गतियों की सब आयू, भोगी है बार अनंतों मैं।
ग्रैवेयक ऊपर नहीं गया, बस इतना बचा दिया मैंने।।2।।

सब मिथ्या अविरति भावों में, क्रोधादि कषाय विभावों में।
इन दुर्भावों में रहा किन्तु, नहिं लिया अपूर्व भाव मैंने।।
इस तरह पंच परिवर्तन से, परिवर्तन करता आया हूँ।
मैं काल अनादी से अब तक, नहिं किंचित् भी सुख पाया हूँ।।3।।

अब काल लब्धि को पाकर मैं, भव भ्रमणों से अकुलाया हूँ।
निज शुद्ध स्वभाव प्रगट करके, स्थिर पद पाने आया हूँ।।
हे कुंथुनाथ! मैं नमूँ तुम्हें, अब दया करो भव फेर हरो।
तुम ही हो शरणागत रक्षक, अब मेरी बार न देर करो।।4।।

यह हस्तिनागपुर तीर्थ बना, प्रभु सूरसेन के घर जन्में।
श्रीकांता माता मुदित हुईं, जब गोद में खेला था तुमने।।
श्रावण वदि दशमी गर्भ तिथी, वैशाख सुदी एकम जनि की।
फिर वही तिथी दीक्षा दिन की, सित चैत्र तृतीया केवल की।।5।।

इक सौ चालिस कर देह तुंग, आयू पंचानवे सहस बरस।
अज लांछन कनक वर्ण सुन्दर, तुम कामदेव चक्रेश्वर प्रभु।।
वैशाख सुदी एकम तिथि में, सम्मेदाचल से मुक्ति वरी।
मुझ ''ज्ञानमती'' कैवल्य करो, बस यही प्रार्थना है मेरी।।6।।

श्री अरजिन स्तुति

–शम्भु छन्द –

अरनाथ! स्वयं अरि कर्मों को, घाता अर्हत्पदवी पायी।
त्रिभुवन के नाथ उदर तिष्ठे, मित्रसेना माता हर्षायी।।
सुरपूज्य सुदर्शन जनक अहो, है धन्य हस्तिनापुरी अहा।
फाल्गुन वदि तीज गर्भ मंगल, मगसिर सुदि चौदस जन्म लहा।।1।।

मगसिर सित दशमी दीक्षा ली, बाह्याभ्यंतर तप तपते थे।
कार्तिक सित बारस के दिन में, केवलज्ञानी रवि चमके थे।।
चौरासि हजार वर्ष आयू, तनु इक सौ बीस हाथ सुन्दर।
मछली लाञ्छन युत कनक वर्ण, प्रभु कामदेव औ चक्रेश्वर।।2।।

शुभ चैत्र अमावस के प्रभुवर, सम्मेदाचल से मृत्युजयी।
निज भेद विज्ञान प्रगट करके, अपने को पाया आप सही।।
मैं भी प्रभु चरण कमल वंदूँ, यह कृपा प्रसाद मिले मुझको।
मैं केवल ''ज्ञानमती'' पाऊँ, मुझसे ही सिद्धि मिले मुझको।।3।।

तीन लोक मंत्र

ॐ ह्रीं अर्हं त्रैलोक्यसंबंधिअर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय-सर्वसाधुजिनधर्मजिनागम-जिनचैत्यचैत्यालयेभ्यो नमः।

तीर्थंकरत्रय मंत्र

ॐ ह्रीं अर्हं तीर्थंकर-चक्रवर्ति-कामदेवपद-समन्वित-श्री शांतिनाथकुंथुनाथअरनाथतीर्थंकरेभ्यो नमः।

जम्बूद्वीप वंदना

मेरु सुदर्शन के सोलह जिनगृह गजदंत गिरी के चार।
कुलगिरि के छह कहे, विदेह क्षेत्र के सोलह गिरि वक्षार।।
रचताचल के चौंतीस जिनगृह, जंबू-शाल्मलि के दो जान।
ये शाश्वत अठत्तर जिनगृह उनको नमूँ सदा सुखदान।।1।।

जंबूद्वीप में जितने भी तीर्थंकर गणधर और यतिगण।
सिद्ध हुए होते औ होंगे उन्हें उन क्षेत्रों को भी नमन।।
पंचकल्याणक भूमि तथा अतिशययुत क्षेत्र सभी प्रणमूँ।
कृत्रिम अकृत्रिम जिनप्रतिमा जिनगृह को भी नित्य नमूँ।।2।।

सात शतक मुनि वंदना

हस्तिनापुरि में श्री अकंपनाचार्य आदि मुनिगण आये।
बलि ने उपसर्ग किया इन पर तब विष्णु कुमार मुनि आये।।
इन सात शतक मुनियों का मुनि उपसर्ग दूर कर हर्षाये।
आचार्य प्रवर को सब मुनिवर को नमन करें हम गुण गायें।।1।।

सप्तर्षि वंदना

सुरमन्यु, श्रीमन्यु ऋषिवर, श्री निचय, सर्वसुंदर स्वामी।
जयवान, विनयलालस गुरुवर जयमित्र सप्तऋषि जगनामी।।
ये मथुरानगरी में आये, महामारी व्याधी हुई शांत।
मैं नमूँ सहस्रों बार इन्हें, ये रोग शोक का करें अन्त।।1।।

जिनवाणी वंदना

श्रुतदेवी बारह अंगों से, निर्मित जिनवाणी मानी है।
सम्यग्दर्शन है तिलक किया, चारित्र वस्त्र परिधानी है।।
चौदह पूर्वों के आभरणों से, सुंदर सरस्वती माता।
इस विध से द्वादशांग कल्पित, जिनवाणी सरस्वती माता।।1।।

श्रुत 'आचारांग' कहा मस्तक, मुख 'सूत्रकृतांग' सरस्वति का।
ग्रीवा है 'स्थानांग' कहा, श्री जिनवाणी श्रुतदेवी का।।
'समवाय अंग' 'व्याख्या प्रज्ञप्ती', माँ की उभय भुजाएं हैं।
द्वय 'ज्ञातृकथांग' 'उपासकाध्ययनांग' स्तन कहलाये हैं।।2।।

नाभी है 'अंतकृद्दशांग' वर नितंब 'अनुत्तरदशांग' है।
वर 'प्रश्नव्याकरण अंग' मात का, जघनभाग कहते श्रुत हैं।।
पादद्वय 'विपाकसूत्रअंग' 'दृष्टिवादांग' कहें श्रुत में।
'सम्यक्त्व' तिलक हैं अलंकार, चौदह पूरब मानें सच में।।3।।

'चौदहों प्रकीर्णक' श्रुत वस्त्रों में, बने बेल-बूटे सुंदर।
ऐसी ये सरस्वती माता, जो द्वादशांगवाणी सुखकर।।
संपूर्ण पदार्थों के ज्ञाता, तीर्थंकर की जो दिव्यध्वनी।
सब द्रव्यों के पर्यायों की, 'श्रुतदेवी' अधिष्ठात्रि मानी।।4।।

जो परमब्रह्मपथ अवलोकन, इच्छुक हैं भव्यात्मा उनको।
स्याद्वाद रहस्य बता करके, भुक्ती मुक्ती देती सबको।।
चिन्मयज्योती मोहांधकार, हरिणी हे जिनवाणी माता।
रवि उदय पूर्वदिशी जेत्री, त्रिभुवन द्योतित करणी माता।।5।।

जो अनादि से दुर्लभ अचिन्त्य, आनन्त्य मोक्षसुख है जग में।
हे सरस्वती मातः! वह भी, तव प्रसाद से अतिसुलभ बने।।
आश्चर्यकारि स्वर्गादिक सब, ऐश्वर्य प्राप्त हों भक्तों को।
मेरे सब वाञ्छित पूर्ण करो, हे मातः! नमस्कार तुमको।।6।।

संपूर्ण स्त्री की सृष्टी में, चूड़ामणि हो हे सरस्वती!
तुम से ही दयाधर्म की औ, संपूर्ण गुणों की उत्पत्ती।।
मुक्ती के लिए प्रमुख कारण, माँ सरस्वती! मैं नमूँ तुम्हें।
तव चरण कमल में शीश धरूँ, भक्तीपूर्वक नित नमूँ तुम्हें[1]।।7।।

शांति मंत्र

ॐ ह्रीं श्री शांतिनाथाय जगत्शांतिकराय
सर्वोपद्रवशांतिं कुरु कुरु ह्रीं नमः।

1. प्रतिष्ठा तिलक पृ. 337।